काव्य मधुवन

पाठ्य पुस्तक

बी. कॉम./एम.बी.एस. द्वितीय सेमिस्टर
चयन आधारित क्रेडिट पद्धति
(सी.बी.सी.एस.)

संपादक
डॉ. विनय कुमार यादव
डॉ. प्रवीण आनंदकंदा

प्रकाशक
प्रसारांग
बेंगलूरु केन्द्र विश्वविद्यालय
बेंगलूरू-560 001

KAVYA MADHUVAN : Edited by Dr. Vinay Kumar Yadav & Dr. Praveen Anandkanda ; Published by Prasaranga, Bangalore Central University, Bengaluru - 560 001 PP. 46+VIII

© : बेंगलूरु केन्द्र विश्वविद्यालय

प्रथम संस्करण : 2019

संपादक :
डॉ. विनय कुमार यादव
डॉ. प्रवीण आनंदकंदा

मूल्यः

प्रकाशक एवं मुद्रक :
प्रसारांग
बेंगलूरु केन्द्र विश्वविद्यालय
बेंगलूरु–560001

भूमिका

बेंगलूरु विश्वविद्यालय के त्रिभाजन के बाद, यह पहला अवसर है कि बेंगलूरु केन्द्र विश्वविद्यालय के अन्तर्गत हिन्दी विभाग के अध्यक्ष प्रो. शेखर के मार्गदर्शन में हिन्दी अध्ययन मण्डल ने बी.कॉम./एम.बी.एस. के छात्रों के लिए नव पाठ्य पुस्तक का निर्माण किया है। 2004-05 में लागू हुए सेमिस्टर प्रणाली का अनुसरण करते हुए प्रस्तुत पुस्तक चयन आधारित क्रेडिट पद्धति (सी.बी.सी.एस.) पर आधारित पाठ्यक्रम है।

आशा है कि प्रस्तुत संकलन बी. कॉम./एम.बी.एस. के विद्यार्थियों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा। इस पाठ्य पुस्तक के निर्माण में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से जिन लोगों का योगदान रहा है, उनके प्रति विश्वविद्यालय आभारी है।

इस संकलन को बहुत कम समय में उत्कृष्ट रूप से छापने वाले मैसूर विश्वविद्यालय के मुद्रणालय के समस्त कर्मचारियों तथा पुस्तक के प्रकाशक, प्रसारांग बेंगलूरु केन्द्र विश्वविद्यालय के प्रति भी हम आभारी हैं।

प्रो. जाफट एस.
कुलपति
बेंगलूरु केन्द्र विश्वविद्यालय
बेंगलूरू-560001

प्रकाशक की बात

बेंगलूरु केन्द्र विश्वविद्यालय ने बी.कॉम./एम.बी.एस. स्नातक वर्ग के लिए चयन आधारित क्रेडिट पद्धति (सी.बी.सी.एस.) के अनुसार हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ. शेखर के मार्गदर्शन में हिन्दी अध्ययन मंडल के द्वारा प्रस्तुत पाठ्य पुस्तक **काव्य मधुवन** का निर्माण किया है।

इस पाठ्य-पुस्तक को समय पर तैयार करने में विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. जाफट एस. का प्रोत्साहन व सहयोग रहा है, तदर्थ मैं उनके प्रति आभारी हूँ।

प्रस्तुत संकलन को अल्प समय में सुन्दर ढंग से छापने में सहयोग करने वाले मैसूर विश्वविद्यालय मुद्रणालय के सभी कर्मचारियों के प्रति भी मैं कृतज्ञ हूँ।

प्रसारांग
बेंगलूरु केन्द्र विश्वविद्यालय
बेंगलूरु-560001

अध्यक्ष की बात

साहित्य के क्षेत्र में समय और समाज के परिवर्तन के अनुरूप साहित्यकारों द्वारा कुछ न कुछ नया लिखा जाता रहा है। साहित्यकार समाज का अभिन्न अंग है, इसलिए उनकी रचनाओं को आलोचनात्मक दृष्टि से परखना पड़ता है। आलोचना और रचना में गहरा सम्बन्ध होता है। इस परिप्रेक्ष्य में आज के युवा छात्र वर्ग और सेमिस्टर प्रणाली को ध्यान में रखते हुए इस पाठ्य संकलन में कुछ ऐसी नई और पुरानी कविताओं को शामिल किया गया है, जो मानव जीवन के समग्र पक्षों को दर्शाती हैं। इनका अध्ययन छात्रों में जीवन दर्शन, मानवीय संवेदनाओं और जीवन मूल्यों के प्रति नई सोच विकसित करने के साथ ही मानवीय पक्ष को सशक्त करेगा, इसी दृष्टि से इस पाठ्य पुस्तक का निर्माण किया गया है। इस कार्य में सहयोग देने वाले संपादकद्वय डॉ. विनय कुमार यादव एवं डॉ. प्रवीण आनंदकंदा के प्रति मैं अपना आभार प्रकट करता हूँ।

इस नई पाठ्य पुस्तक के निर्माण में विश्वविद्यालय के कुलपति महोदय डॉ. जाफट एस. ने अत्यधिक प्रोत्साहन दिया, तदर्थ मैं उनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

पुस्तक के प्रकाशक प्रसारांग, बेंगलूरू केन्द्र विश्वविद्यालय एवं मैसूर विश्वविद्यालय मुद्रणालय के सभी कर्मचारियों के प्रति भी मैं आभारी हूँ।

डॉ. शेखर
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
बेंगलूरू विश्वविद्यालय
बेंगलूरू-560056

सम्पादक की कलम से...

साहित्य किसी समाज को समझने–परखने और अभिव्यक्त करने का सशक्त माध्यम होता है। इसलिए साहित्य और समाज के विविध सरोकारों पर चर्चाएं होती रहती हैं और भिन्न–भिन्न कसौटियों पर इसके मूल्यांकन भी होते रहते हैं। प्रत्येक रचनाकार के पास एक बिम्ब होता है, जिसमें वह जीता है और लगातार अपने युग विशेष की परिस्थितियों से संघर्षरत रहता है, उनसे प्रभावित होता है और उन्हें प्रभावित भी करता है।

हिन्दी साहित्य का आरंभ करने वाले सिद्ध और नाथ पंथी योगी समस्त भारत में घूम–घूम कर अपने काव्यों के माध्यम से आठवीं शताब्दी से बारहवीं शताब्दी तक राष्ट्र की एकता का प्रचार–प्रसार करते रहे। उन्होंने एक भाषा तैयार की जिसमें भारत की सभी क्षेत्रीय भाषाओं के बहु प्रचलित शब्दों के प्रवेश का द्वार खुला। इन्हीं सिद्ध और नाथ पंथियों के प्रयास से उस भाषा का विकास हुआ, जिसे कालान्तर में या आज हिन्दी कहा जाता है।

वीर गाथा काल से लेकर आधुनिक काल की खड़ी बोली तक कई कवियों ने हिन्दी पद्य साहित्य को समृद्ध किया है। लेकिन भूमंडलीकरण, निजीकरण, व्यावसायिकता और बाज़ारवाद के इस युग में साहित्य की प्रासंगिकता लुप्त न हो जाये, इसलिए युवापीढ़ी के उस वर्ग के समक्ष साहित्यिक विचार रखने का प्रयास किया गया है, जो बदलते हुए परिवेश से अधिक प्रभावित है। यकीनन युवापीढ़ी की सोच बदल रही है और उनके पैरों तले जमीन खिसक रही है, जिसका उन्हें एहसास नहीं हो रहा है। उनमें एक सतही मानसिकता पनप रही है, जिसके कारण सार्थक जीवन मूल्यों से उनके भटकने की संभावना बढ़ गयी है। इस संदर्भ में यह अत्यावश्यक है कि उनमें अपने देश, समाज और साहित्य के प्रति जिम्मेदारी निभाने की सोच विकसित हो।

इस उद्देश्य से प्रस्तुत काव्य संग्रह **काव्य मधुवन** में ऐसी कुछ कविताओं का चयन किया गया है, जो वाणिज्य के विद्यार्थियों को व्यापार की

दुनिया में प्रगतिशील होने के साथ–साथ भारतीय समाज, साहित्य और संस्कृति से भी जोड़े रख सके।

प्रस्तुत संकलन में जिन कवियों की कवितायें संग्रहीत हैं, उनके प्रति हम आभारी हैं। आशा करते हैं कि प्रस्तुत पुस्तक विद्यार्थियों में सामाजिक सरोकार की भावना के साथ–साथ उन में मानवीय मूल्यों को भी प्रबल करने में सक्षम होगी।

डॉ. विनय कुमार यादव
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
बिशप कॉटन वुमेन क्रिश्चियन कॉलेज,
बेंगलूरू–560027

अनुक्रमणिका

		पृष्ठ संख्या
1. वृन्द के दोहे	वृन्दावन दास	1.
2. किष्किन्धा कांड	तुलसीदास	5
3. जुगनू	हरिवंशराय बच्चन	9
4. सच हम नहीं सच तुम नहीं	जगदीश गुप्त	12
5. कालिदास सच–सच बतलाना	नागार्जुन	15
6. मन का संतोष	अटल बिहारी वाजपेयी	20
7. स्वप्न झरे फूल से,गीत चुभे शूल से	गोपालदास 'नीरज'	25
8. उर्वशी	रामधारीसिंह 'दिनकर'	31
9. अशोक की चिन्ता	जयशंकर प्रसाद	36
परिशिष्ट :		
1. वाणिज्यिक तथा प्रशासनिक शब्दावली		43

1. वृन्द के दोहे

– वृन्दावनदास

मूरख को हित के वचन, सुनि उपजत है कोप ।
साँपहि दूध पिवाइये, वाके मुख विष ओप ।।

अपनी पहुँच विचारि कै, करतब करिये दौर ।
तेते पाँव पसारिये, जेती लाँबी सौर ।।

उद्यम कबहुँच न छोड़िये, पर आसा के माद ।
गागरि कैसे फोरिये, उनियो देखि पयोद ।।

भले-बुरे सब एक से, जौ लौं बोलत नाहिं ।
जान परंतु है काक-पिक, रितु बसंत का माहिं ।।

जो जाको गुन जानही, सो तिहि आदर देत ।
कोकिल अबरि लेत है, काग निबौरी लेत ।।

मन भावन के मिलन के, सुख को नहिन छोर ।
बोलि उठै, नचि-नचि उठै, मोर सुनत घनघोर ।।

निरस बात, सोई सरस, जहाँ होय हिय हेत ।
गारी प्यारी लगै, ज्यों-ज्यों समधन देत ।।

फेर न हवै हैं कपट सो, जो कीजै ब्यौपार ।
जैसे हाँडी काठ की, चढ़ै न दूजी बार ।।

नैना देत बताय सब, हिये को हेत अहेत ।
जैसे निरमल आरसी, भली बुरी कह देत ।।

सबै सहायक सबल के, कोउ न निबल सहाय ।
पवन जगावत आग कौ, दीपहिं देत बुझाय ।।

***

शब्दार्थ :

उपजत – उपजना,
करतब – व्यापार, कारोबार,
पयोद – बादल,
जौ लौं – जब तक,
माहिं – महीना,
अवरि – आम,
गारी – गाली,
ब्यौपार – व्यापार,
काठ – लकड़ी,
हेत – हित, स्नेह,
निबल – निर्बल

वृन्दावनदास (1643 – 1723)

डॉ. नगेन्द्र के अनुसार वृंद का जन्म सन् 1643 को मेड़ता गाँव में हुआ था। इनका पूरा नाम 'वृन्दावनदास' था। इनके पिता जी का नाम रूप जी और माता का नाम कौशल्या था। 10 वर्ष की अवस्था में आप काशी आये और तारा जी नामक पंडित के पास रहकर दर्शन, साहित्य आदि विविध विषयों का ज्ञान प्राप्त किया। आप मुगल बादशाह औरंगजेब के यहाँ दरबारी कवि रहे। मेड़ता वापस आने पर जसवंत सिंह के प्रयास से औरंगजेब के कृपा पात्र नवाब मोहम्मद खाँ के माध्यम से इनका प्रवेश शाही दरबार में हुआ। औरंगजेब का पौत्र अजी मुराशान जब बंगाल का शासक बना तो वृंद भी उसके साथ चले गए। सन् 1707 में किशनगढ़ के राजा राजसिंह ने अजी मुराशान से इनको माँग लिया। सन् 1723 में किशनगढ़ में ही वृन्द का देहावसान हो गया।

वृन्द की ग्यारह रचनाएँ हैं– सम्मेत शिखर छंद, भाव–पंचाशिका, श्रृंगार शिखा, पवन पचीसी, वृन्द सतसई, यमक सतसई आदि। इनकी रचनाओं में बारह महीनों का, श्रृंगार के विभिन्न भावों का, नायिका भेद, षड्ऋतु वर्णन, नीति के दोहे बहुत प्रसिद्ध हैं।

भावार्थ :

1) साँप को दूध पिलाने पर भी उसके मुँह से विष ही निकलता है। इसी प्रकार मूर्ख व्यक्ति से उसके हित के वचन कहे जाने पर भी उसे क्रोध ही आता है।

2) व्यक्ति के पास ओढ़ने के लिए जितनी लंबी कम्बल हो उसे उतना ही अपने पैर को फैलाना चाहिए। इसी प्रकार व्यक्ति को उसके पास उपलब्ध संसाधनों के अनुरूप ही अपना कारोबार फैलाना चाहिए।

3) कवि कहते हैं कि बादलों को उमड़ते हुए देखकर हमें अपने घड़ों को फोड़ना नहीं चाहिए। इसी प्रकार दूसरों से कुछ प्राप्त होगा यह सोचकर हमें अपना प्रयास कभी नहीं छोड़ना चाहिए।

4) जब तक कोई कुछ बोलता नहीं है तब तक उसके भले–बुरे होने का पता नहीं चलता है। जब वह बोलता है तब ज्ञात होता है कि वह भला है या बुरा। जैसे वसंत ऋतु आने पर जब कौआ और कोयल बोलते हैं तब उनकी वाणी से पता चलता है कि किसकी वाणी कर्कश है और किसकी मीठी।

5) जो व्यक्ति जिसके गुणों को जानता है, वह उसी के गुणों का आदर करता है। जैसे कोयल आम का रसास्वादन करती है जबकि कौआ नीम की निम्बौरी से ही सन्तुष्ट हो जाता है।

6) जैसे मोर बादलों का गर्जन सुनकर मधुर आवाज़ में बोलने और नाचने लगता है, वैसे ही हमारे मन को प्रिय लगने वाले व्यक्ति के मिलने पर हमें असीमित आनन्द की प्राप्ति होती है और प्रसन्नता की कोई सीमा नहीं रहती है।

7) जिस व्यक्ति के प्रति हमारे हृदय में लगाव और स्नेह का भाव होता है, उस व्यक्ति की नीरस बात भी सरस लगने लगती है। जैसे समधिन के द्वारा दी जाने वाली गालियाँ भी अच्छी लगती हैं क्योंकि उनमें स्नेह का भाव होता है।

8) जिस प्रकार लकड़ी से बनी हुई हाँडी को दुबारा चूल्हे पर नहीं चढ़ाया जा सकता है, उसी प्रकार जो मनुष्य कपटपूर्वक व्यापार करता है, उसका व्यापार लम्बे समय तक नहीं चलता है।

9) जिस प्रकार स्वच्छ दर्पण किसी व्यक्ति की वास्तविक छवि को दिखा देता है, उसी प्रकार किसी व्यक्ति के मन में दूसरे के प्रति स्नेह का भाव है या नहीं, यह बात उसके नेत्रों से ही ज्ञात हो जाती है।

10) तेज हवा जलती हुई आग को और अधिक प्रचंड बना देती है, लेकिन वही दीपक को बुझा भी देती है। इस संसार का यही नियम है कि बलवान व्यक्ति की सहायता करने के लिए तो कई सामने आ जाते हैं, जबकि निर्बल का कोई सहायक नहीं होता।

2. किष्किन्धा कांड

– तुलसीदास

आगे चले बहुरि रघुराया। ऋष्मूक्य पर्वत निअराया।।
तहँ रह सचिव सहित सुग्रीवा। आवत देखि अतुल बल सींवा।।
अति सभीत कह सुनु हनुमाना। पुरुष जुगल बल रूप निधाना।।
धरि बटु रूप देखु तैं जाई। कहेसु जानि जियँ सयन बुझाई।।
पठए बालि होहिं मन मैला। भागौं तुरत तौं यह सैला।।
बिप्र रूप धरि कपि तहँ गयऊ। माथ नाई पूछत अस भयऊ।।
को तुम्ह स्यामल गौर सरीरा। छत्री रूप फिरहु बन बीरा।।
कठिन भूमि कोमल पद गामी। कवन हेतु बिचरहु बन स्वामी।।
मृदुल मनोहर सुंदर गाता। सहत दुसह बन आतप बाता।।
की तुम्ह तीनि देव महँ कोऊ। नर नारायन की तुम्ह दोऊ।।

दो.– जग कारन तारन भव भंजन धरनी भार।
की तुम्ह अखिल भुवन पति लीन्ह मनुज अवतार।।

कोसलेस दसरथ के जाए। हम पितु बचन मानि बन आए।।
नाम राम लछिमन दोउ भाई। संग नारि सुकुमारि सुहाई।।
इहाँ हरी निसिचर बैदेही। बिप्र फिरहिं हम खोजत तेही।।
आपन चरित कहा हम गाई। कहहु बिप्र निज कथा बुझाई।।
प्रभु पहिचानि परेउ गहि चरना। सो सुख उमा जाइ नहिं बरना।।
पुलकित तन मुख आव न बचना। देखत रुचिर बेष कै रचना।।
पुनि धीरज धरि अस्तुति कीन्ही। हरष हृदयँ निज नाथहि चीन्ही।।
मोर न्याउ मैं पूछा साईं। तुम्ह पूछहु कस नर की नाईं।।
तव माया बस फिरउँ भुलाना। ता ते मैं नहिं प्रभु पहिचाना।।

दो.– एकु मैं मंद मोहबस कुटिल हृदय अग्यान।
पुनि प्रभु मोहि बिसारेउ दीनबंधु भगवान।।

जदपि नाथ बहु अवगुन मोरें। सेवक प्रभुहि परै जनि भोरें।।
नाथ जीव तव मायाँ मोहा। सो निस्तरई तुम्हारेहिं छोहा।।
ता पर मैं रघुवीर दोहाई। जानउँ नहि कछु भजन उपाई।।
सेवक सुत पति मातु भरोसे। रहइ असोच बनई प्रभु पोसें।।
अस कहि परेउ चरन अकुलाई। निज तनु प्रगटि प्रीति उर छाई।।
तब रघुपति उठाइ उर लावा। निज लोचन जल सीचि जुड़ावा।।
सुनु कपि जियँ मानसि जनि ऊना। तै मम प्रिय लछिमन ते दूना।।
समदरसी मोहि कह सब कोऊ। सेवक प्रिय अनन्य गति सोऊ।।

दो.– अनन्य जाके असि मति न टरइ हनुमंत।
मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत।।

***

शब्दार्थ :

निअराया – निकट, पास
तहँ – वहाँ
सींवा – सीमा
सभीत – भयभीत
जुगल – युगल, दोनों
बटु – वटु, ब्रह्मचारी
सयन – इशारों से
बुझाई – समझाना, समझाकर कह देना
पठए – भेजे हुए
तजौं – छोड़ना
सैला – शैल, पर्वत

शब्दार्थ :

विप्र – ब्राह्मण
गाता – शरीर
आतप – धूप
बाता – वायु
तीनि देव – ब्रह्मा, विष्णु, महेश
भंजन –
कोसलेस – दशरथ, कोसल राजा
जाए – जाया, पुत्र
बैदेही – वैदेही,
बचना – वचन
रुचिर – सुन्दर

तुलसीदास :–

तुलसीदास का जन्म उत्तर प्रदेश के राजापुर नामक गाँव में संवत् 1554 के श्रावण मास के शुक्ल पक्ष की सप्तमी के दिन अभुक्त मूल नक्षत्र में हुआ था। इनके पिता आत्माराम दुबे एक प्रतिष्ठित सरयूपारीय ब्राह्मण थे और उनकी माता का नाम हुलसी था। इनका विवाह रत्नावली से हुआ था। अपनी पत्नी रत्नावली से अत्यधिक प्रेम के कारण तुलसी को रत्नावली की फटकार 'लाज न आई आपको दौरे आएहु नाथ' के रूप में सुननी पड़ी, जिससे इनका जीवन ही परिवर्तित हो गया और उन्होंने वैराग्य ले लिया। इनके गुरु बाबा नरहरिदास थे, जिन्होंने इन्हें दीक्षा दी। इनका अधिकांश जीवन चित्रकूट, काशी तथा अयोध्या में बीता।

संवत् 1631 में रामनवमी के दिन तुलसीदास जी ने श्री रामचरित मानस की रचना प्रारंभ की। दो वर्ष सात महीने और छब्बीस दिन में इस अद्‌भुत ग्रंथ को सम्पन्न किया। अपने दीर्घ जीवन काल में उन्होंने निम्नलिखित कालजयी ग्रंथों की रचना की:– रामललानहछू, वैराग्यसंदीपनी, रामाज्ञाप्रश्न, जानकी मंगल, रामचरित मानस, सतसई, पार्वती गीतावली, बरवै रामायण, दोहावली, कवितावली, कृष्ण गीतावली, विनय पत्रिका (अन्तिम रचना)।

तुलसीदास राम भक्त कवि थे। उनकी बुद्धि, कल्पना और भावुकता में राम की मर्यादा और लीला का आधिपत्य था। उनके राम मर्यादा पुरुषोत्तम एवं आदर्शों के संस्थापक थे। आदर्श की प्रतिष्ठा से ही तुलसीदास लोकनायक कवि बने और उनका काव्य लोकमंगल की भावना से ओतप्रोत हुआ। उन्होंने अपने युग की लगभग सभी काव्य शैलियों को अपनाया था, चाहे वह छप्पय हो, गीति पद्धति, सवैया, दोहा आदि। रामकाव्य में नव रसों का प्रयोग किया है और इनकी रचनाएँ मुख्यत: अवधी भाषा में की गई है। उनके काव्य में अलंकारों का सहज और स्वाभाविक प्रयोग मिलता है।

हिन्दी साहित्य जगत के इस महान कवि का निधन संवत् 1680 में हुआ।

किष्किन्धा कांड :– गोस्वामी तुलसीदास रचित श्री रामचरित मानस का चतुर्थ सोपान है– किष्किन्धा कांड। इसमें भगवान श्रीराम की अपने भक्त हनुमानजी से भेंट, सुग्रीव से मैत्री, राजा बालि के वध, सुग्रीव की मदद से माता सीता की खोज की योजना बनाने और उसकी शुरुआत तक की कथा का वर्णन किया गया है।

सीता की खोज में मलय पर्वत और चंदन वनों को पार करते हुए राम–लक्ष्मण ऋष्यमूक पर्वत की ओर बढ़े। यहां उनकी भेंट हनुमान और सुग्रीव से हुई। उन्होंने सीता के आभूषणों को देखा। ऋष्यमूक पर्वत वाल्मीकि रामायण में वर्णित वानरों की राजधानी किष्किंधा के निकट स्थित था। इसी पर्वत पर श्रीराम की हनुमान से भेंट हुई थी। बाद में हनुमान ने राम और सुग्रीव की भेंट करवाई, जो एक अटूट मित्रता बन गई। जब महाबली बाली अपने भाई सुग्रीव को मारकर किष्किंधा से भागा तो वह ऋष्यमूक पर्वत पर ही आकर छिपकर रहने लगा था। ऋष्यमूक पर्वत तथा किष्किंधा नगर कर्नाटक के बेल्लारी जिले के अन्तर्गत आने वाले हम्पी में स्थित है।

***

3. जुगनू

– हरिवंशराय बच्चन

अँधेरी रात में दीपक जलाए कौन बैठा है?

उठी ऐसी घटा नभ में,
छिपे सब चाँद और तारे,
उठा तूफान वह नभ में,
गए बुझ दीप भी सारे,

मगर इस रात में भी लौ लगाए कौन बैठा है?
अंधेरी रात में दीपक जलाए कौन बैठा है?

गगन में गर्व से उठ–उठ,
गगन में गर्व से घिर–घिर,
गरज कहती घटाएँ हैं,
नहीं होगा उजाला फिर,

मगर चिर ज्योति में निष्ठा जगाए कौन बैठा है?
अंधेरी रात में दीपक जलाए कौन बैठा है?

तिमिर के राज का ऐसा,
कठिन आतंक छाया है,
उठा जो शीश सकते थे,
उन्होंने सिर झुकाया है,

मगर विद्रोह की ज्वाला जलाए कौन बैठा है?
अंधेरी रात में दीपक जलाए कौन बैठा है?

प्रलय का सब समां बांधे,
प्रलय की रात है छाई,
विनाशक शक्तियों की इस,
तिमिर के बीच बन आई,

मगर निर्माण में आशा दृढ़ाए कौन बैठा है?
अंधेरी रात में दीपक जलाए कौन बैठा है?

प्रभंजन मेघ दामिनी ने,
क्या न तोड़ा क्या न फोड़ा,
धरा के और नभ के बीच,
कुछ साबित नहीं छोड़ा,

मगर विश्वास को अपने बचाए कौन बैठा है?
अंधेरी रात में दीपक जलाए कौन बैठा है?

प्रलय की रात में सोचे,
प्रणय की बात क्या कोई,
मगर पड़ प्रेम बन्धन में,
समझ किसने नहीं खोई,

किसी के पथ में पलकें बिछाए कौन बैठा है?
अंधेरी रात में दीपक जलाए कौन बैठा है?

***

शब्दार्थ :

प्रभंजन – प्रचंड वायु, तेज़ हवा
चिर – शाश्वत
तिमिर – अंधकार
पथ – राह, रास्ता
दामिनी – बिजली

हरिवंशराय बच्चन :-

हरिवंशराय बच्चन का जन्म 27 नवम्बर, 1907 को इलाहाबाद के पास प्रतापगढ़ जिले के एक छोटे से गाँव बाबूपट्टी में एक कायस्थ परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम प्रतापनारायण श्रीवास्तव और माता का नाम सरस्वती देवी था। इनको बाल्यकाल में 'बच्चन' कहा जाता था और बाद में इसी नाम से मशहूर हुए। इन्होंने प्रयाग विश्वविद्यालय से अंग्रेजी में एम.ए. और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से अंग्रेजी साहित्य के विख्यात कवि डब्ल्यू.बी. यीट्स की कविताओं पर शोध कर पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। इलाहाबाद के प्रवर्तक बच्चन हिन्दी कविता के उत्तर छायावाद काल के प्रमुख कवियों में से एक थे। इनकी कुछ प्रमुख कृतियाँ हैं– मधुशाला, मधुबाला, मधु कलश, निशा निमंत्रण, मिलन यामिनी (कविता संग्रह), क्या भूलूँ क्या याद करूँ, नीड़ का निर्माण फिर (आत्म कथाएँ) आदि।

हरिवंशराय बच्चन की कृति 'दो चट्टानें' को 1968 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। बिड़ला फाउण्डेशन ने उनकी आत्मकथा के लिए उन्हें 'सरस्वती सम्मान' प्रदान किया था। भारत सरकार द्वारा 1976 में साहित्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में पद्म भूषण से सम्मानित किया गया था। उन्होंने भारत सरकार के विदेश मंत्रालय में हिन्दी विशेषज्ञ का पद संभाला और बाद में राज्यसभा के सदस्य मनोनीत हुए। उनकी मृत्यु 18 जनवरी 2003 को मुम्बई, महाराष्ट्र में हुई।

'जुगनू' कविता में बच्चन ने रातों में टिमटिमाने वाले जुगनुओं के बारे में अवगत कराया है। उनकी प्रवृत्ति ही है एक छोटा–सा दीपक बने रहना। जुगनू को सन्दर्भ में लेकर बच्चन जी एक छोटे से चिराग की अहमियत समझाते हैं। इस कविता द्वारा वे यह बताते हैं कि अंधेरे में एक लौ भी काफी होती है। इस कविता में कवि की आशावादी भावना परिलक्षित होती है।

4. सच हम नहीं, सच तुम नहीं

– जगदीश गुप्ता

सच हम नहीं, सच तुम नहीं।
सच है सतत् संघर्ष ही।

संघर्ष से हटकर जिए तो क्या जिए,
हम या कि तुम ।
जो नत हुआ वह मृत हुआ,
ज्यों वृन्त से झरकर कुसुम।
जो पन्थ भूल रुका नहीं,
जो हार देख झुका नहीं,
जिसने मरण को भी लिया हो जीत,
है जीवन वही।
सच हम नहीं, सच तुम नहीं।

ऐसा करो जिससे न प्राणों में कहीं जड़ता रहे।
जो है जहाँ चुपचाप अपने आप से लड़ता रहे।
जो भी परिस्थितियाँ मिलें,
काँटे चुभें कलियाँ खिलें,
टूटे नहीं इन्सान, बस सन्देश यौवन का यही।
सच हम नहीं, सच तुम नहीं।

हमने रचा आओ हमीं अब तोड़ दें इस प्यार को।
यह क्या मिलन, मिलना वही जो मोड़ दे मझधार को।
जो साथ फूलों के चले,
जो ढाल पाते ही ढले

अपने हृदय का सत्य अपने आप हमको खोजना।
अपने नयन का नीर अपने आप हमको पोंछना।
आकाश सुख देता नहीं
धरती पसीजी है कहीं!
हर एक राही को भटक कर ही दिशा मिलती रही।
सच हम नहीं, सच तुम नहीं।
बेकार है मुस्कान से ढकना हृदय की खिन्नता।
आदर्श हो सकती नहीं तन और मन की भिन्नता।
जब तक बंधी है चेतना
जब तक प्रणय दुख से घना,
तब तक न मानूँगा कभी इस राह को ही मैं सही
सच हम नहीं, सच तुम नहीं।

***

शब्दार्थ :
नत – झुकना
वृन्त – डाल

जगदीश गुप्त :-

जगदीश गुप्त जी का जन्म 3 अगस्त 1924 को शाहाबाद, हरदोई (उ.प्र.) में हुआ। हिन्दी नई कविता के प्रमुख कवियों में से ये एक हैं। आपने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एम.ए. तथा एम फिल. की उपाधि प्राप्त की और 1950 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में प्राध्यापक के पद पर नियुक्त हुए। 1954 में 'नई कविता' के सम्पादन के साथ आरम्भ की गई अपनी साहित्यिक यात्रा में डॉ. गुप्त ने 35 ग्रंथों की रचना की।

डॉ. गुप्त को उत्तर प्रदेश के 'भारत भारती' पुरस्कार तथा मध्य प्रदेश के मैथिलीशरण गुप्त पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। इनकी कुछ प्रमुख कृतियाँ हैं- नाव के पाँव, शम्बूक, शब्द-दंश, बोधिवृक्ष, नई कविता, आदित्य एकांत, गोपा गौतम, स्वरूप और समस्याएँ आदि। इनका निधन 26 मई 2001 में हुआ।

'सच हम नहीं, सच तुम नहीं' कविता में कवि यह कहना चाहता है कि जीवन संघर्षमय है और जो इसे सहजता से स्वीकारता है, वही मंज़िल तक पहुँचता है। बिना हार माने और बिना प्रतिकूल परिस्थितियों के सामने झुके, जो संघर्ष पथ पर सदा चलता रहता है, उसी का जीवन सार्थक होता है।

***

5. कालिदास सच–सच बतलाना

– नागार्जुन

कालिदास! सच–सच बतलाना
इन्दुमती के मृत्युशोक से
अज रोया या तुम रोये थे?
कालिदास ! सच–सच बतलाना!
शिवजी की तीसरी आँख से
निकली हुई महाज्वाला में
घृत–मिश्रित सूखी समिधा–सम
कामदेव जब भस्म हो गया
रति का क्रंदन सुन आँसू से
तुमने ही तो दृग धोये थे?
कालिदास ! सच–सच बतलाना
रति रोयी थी या तुम रोये थे?
वर्षा ऋतु की स्निग्ध भूमिका
प्रथम दिवस आषाढ़ मास का
देख गगन में श्याम घन – घटा
विधुर यक्ष का मन जब उचटा,
खड़े–खड़े तब हाथ जोड़कर
चित्रकूट के सुभग शिखर पर
उस बेचारे ने भेजा था
जिनके द्वारा ही सन्देश
उन पुष्करावर्त मेघों का
साथी बनकर उड़ने वाले

कालिदास ! सच–सच बतलाना
पर पीड़ा से पूर–पूर हो
थक–थककर और चूर–चूर हो
अमल–धवल गिरि के शिखरों पर
प्रियवर ! तुम कब तक सोये थे ?
रोया यक्ष कि तुम रोये थे ?
कालिदास ! सच–सच बतलाना।

***

शब्दार्थ :

घृत – घी,
समिधा – हवन की लकड़ी
क्रंदन – विलाप
स्निग्ध – स्नेह युक्त
प्रेममय/उचटा – विरक्त, ऊबना।
पुष्करावर्त – जल कणों से घना

नागार्जुन :–

कवि नागार्जुन का जन्म सन् 1911 ई. की ज्येष्ठ पूर्णिमा को वर्तमान मधुबनी जिले के सतलखा गाँव में हुआ था। यह उनका ननिहाल था। उनका पैतृक गाँव वर्तमान दरभंगा जिले का तरौनी था। इनके पिता का नाम गोकुल मिश्र और माता का नाम उमा देवी था। इनका मूल नाम वैद्यनाथ मिश्र था। छह वर्ष की आयु में इनकी माता का देहांत हो गया। मातृहीन पुत्र को कंधे पर बिठाकर इनके पिता सम्बन्धियों के यहाँ गाँव–गाँव जाया करते थे और शायद यही कारण था कि बड़े होकर घूमना उनके जीवन का स्वाभाविक अंग बन गया। बनारस में उन्होंने संस्कृत की विधिवत पढ़ाई शुरू की। उन पर आर्य समाज और बौद्ध दर्शन का काफी प्रभाव रहा। बौद्ध के रूप में उन्होंने राहुल सांकृत्यायन को अग्रज माना था। उन्होंने लंका के विख्यात 'विद्यालंकार परिवेण' में बौद्ध धर्म की दीक्षा ली।

उनका असली नाम वैद्यनाथ मिश्र था, परंतु हिन्दी साहित्य में उन्होंने नागार्जुन तथा मैथिली में 'यात्री' उपनाम से रचनाएं की। उनकी पहली हिन्दी रचना 'राम के प्रति' नामक कविता थी, जो 1934 ई. में लाहौर से निकलने वाले साप्ताहिक 'विश्वबन्धु' में छपी थी। इन्होंने कालिदास के 'मेघदूत' का अनुवाद तथा जयदेव के 'गीत गोविंद' एवं विद्यापति के सौ गीतों का भावानुवाद भी किया था। इसके अतिरिक्त इनकी बहुचर्चित रचनायें हैं– युगधारा, सतरंगे पंखोंवाली, प्यासी पथराई आँखें आदि कविता संग्रह हैं; रतिनाथ की चाची, बलचनमा, कुंभीपाक, बाबा बटेसरनाथ, वरुण के बेटे, गरीबदास आदि उपन्यास हैं।

नागार्जुन के काव्य में पूरी भारतीय परम्परा ही जीवंत रूप में उपस्थित देखी जा सकती है। उनका कवि व्यक्तित्व कालिदास और विद्यापति जैसे कालजयी कवियों के रचना संसार के गहन अवगाहन, बौद्ध एवं मार्क्सवाद जैसे बहुजनोन्मुख दर्शन के व्यावहारिक अनुगमन और

सबसे बढ़कर अपने समय और परिवेश की समस्याओं, चिन्ताओं और संघर्षों से प्रत्यक्ष जुड़ाव तथा लोकसंस्कृति एवं लोकहृदय की गहरी पहचान से निर्मित है। उनका 'यात्रीपन' भारतीय मानस एवं विषय वस्तु को समग्र और सच्चे रूप में समझने का साधन रहा है। वे सही अर्थ में भारतीय मिट्टी से बने आधुनिकतम कवि हैं। पारम्परिक काव्य रूपों को नए कथ्य के साथ इस्तेमाल करने और नए काव्य कौशलों को सम्भव करने वाले अद्वितीय कवि रहे। इनकी कविताओं में कबीर से लेकर धूमिल तक की पूरी हिन्दी काव्य–परम्परा एक साथ जीवंत है और 'बलचनमा' और 'वरुण के बेटे' जैसे उपन्यासों के द्वारा हिन्दी में आंचलिक उपन्यास लेखन की नींव रखी।

नागार्जुन ने कालिदास और विद्यापति का गहन अध्ययन किया था। कालिदास इनके सर्वप्रिय कवि थे और मेघदूत इनकी सर्वाधिक प्रिय कृति थी। नागार्जुन प्रगतिवादी धारा के कवि थे। इन्होंने मार्क्सवाद का भी गहन अध्ययन किया था। इसके साथ ही अपने समय और परिवेश की समस्याओं एवं संघर्षों से जुड़े हुए थे।

इनको 1969 में साहित्य अकादमी पुरस्कार, उ.प्र. हिन्दी संस्थान लखनऊ की ओर से भारत–भारती सम्मान, म.प्र. सरकार द्वारा राजेन्द्र शिखर सम्मान (1994) आदि प्राप्त हुए हैं। इस कालजयी साहित्यकार का निधन 5 नवम्बर, 1998 को ख्वाजा सराय, दरभंगा, बिहार में हुआ।

प्रस्तुत कविता में कवि सदा प्रतिबिम्बित होता रहा है। कालिदास सच सच बतलाना एक वैयक्तिक एवं भावना प्रधान कविता है। इसमें कवि का तर्क और मस्तिष्क कम बोलता है, उसकी भावना और उसका हृदय अधिक मुखर होता है। कालिदास के तीन प्रमुख काव्यग्रंथों को केन्द्र में

रखकर नागार्जुन ने कालिदास की प्रेम भावनाओं को पाठकों के सामने अनावृत किया है। इन तीनों काव्य ग्रंथों में अभिव्यक्त प्रेमी हृदय की वेदना कहीं न कहीं प्रेम विह्वल कालिदास की वेदना है। तीनों प्रबन्ध काव्यों में अभिव्यक्त वियोग वेदना कालिदास का भोगा हुआ यथार्थ प्रतीत होता है।

***

6. मन का सन्तोष

– अटलबिहारी वाजपेयी

पृथ्वी पर
मनुष्य ही ऐसा एक प्राणी है,
जो भीड़ में अकेला और,
अकेले में भीड़ से घिरा हुआ अनुभव करता है।
मनुष्य को झुण्ड में रहना पसंद है।
घर–परिवार से प्रारम्भ कर,
वह बस्तियाँ बसाता है।
गली–ग्राम, पुर–नगर सजाता है।
सभ्यता के निष्ठुर दौड़ में
संस्कृति को पीछे छोड़ता हुआ,
प्रकृति पर विजय,
मृत्यु को मुट्ठी में करना चाहता है।
अपनी रक्षा के लिए
औरों के विनाश के सामान जुटाता है।
आकाश को अभिशप्त,
धरती को निर्वसन,
वायु को विषाक्त
जल को दूषित करने में संकोच नहीं करता।
किन्तु यह सब कुछ करने के बाद
जब वह एकांत में बैठकर विचार करता है,

वह एकांत, फिर घर का कोना हो,
या कोलाहल से भरा बाज़ार,
या प्रकाश की गति से तेज उड़ता जहाज,
या कोई वैज्ञानिक प्रयोगशाला,
या मंदिर
या मरघट
जब वह आत्मलोचन करता है,
मन की परतें खोलता है,
स्वयं से बोलता है,
हानि–लाभ का लेखा–जोखा नहीं
क्या खोया, क्या पाया का हिसाब भी नहीं,
जब वह पूरी ज़िन्दगी को ही तौलता है,
अपनी कसौटी पर स्वयं को ही कसता है,
निर्ममता से निरखता परखता है,
तब वह अपने मन से क्या कहता है।
इसी का महत्व है, यही उसका सत्य है।
अंतिम यात्रा के अवसर पर,
विदा की वेला में,
जब सबका साथ छूटने लगता है,
शरीर भी साथ नहीं देता,
तब आत्मग्लानि से मुक्त
यदि कोई हाथ उठाकर यह कह सकता है
कि उसने जीवन में जो कुछ किया,
सही समझकर किया,

किसी को जान–बूझकर चोट पहुँचाने के लिए नहीं,
सहज कर्म समझकर किया,
तो उसका अस्तित्व सार्थक है,
उसका जीवन सफल है।

***

शब्दार्थ :
अभिशप्त – शापित
निर्वसन – वस्त्रहीन
निर्ममता – निष्ठुरता

अटल बिहारी वाजपेयी :-

भारत के दसवें प्रधानमंत्री एवं कवि श्री अटल विहारी वाजपेयी जी का जन्म 25 दिसम्बर 1924 को ग्वालियर मध्यप्रदेश में पंडित कृष्ण विहारी वाजपेयी और श्रीमती कृष्णा वाजपेयी के यहाँ हुआ था। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा ग्वालियर में ही हुई। इन्होंने बी.ए. की उपाधि ग्वालियर के विक्टोरिया कॉलेज तथा राजनीति शास्त्र में एम.ए. की उपाधि कानपुर उत्तर प्रदेश के डी.ए.वी. कॉलेज से प्राप्त की। ये पाञ्चजन्य, राष्ट्रधर्म, दैनिक स्वदेश और वीर अर्जुन जैसे पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादक रहे।

अटल जी सन् 1957 में पहली बार सांसद बने और अपनी राजनीतिक यात्रा में तीन बार देश के प्रधानमंत्री बने। पहली बार 1996 में मात्र 13 दिन के लिए, 1998 में 13 महीने के लिए और तीसरी बार 1999 से 2004 तक 5 वर्ष की अवधि का अपना कार्यकाल पूरा किया। सन 1997 में जनता पार्टी की सरकार में विदेश मंत्री रहते हुए अटल जी ने संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी में भाषण दिया, जो काफी लोकप्रिय रहा। इसके बाद कई बार अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर उन्होंने हिन्दी में भाषण देकर हिन्दी को विश्व की एक लोकप्रिय भाषा बनाने का बृहद कार्य किया।

अटल जी ने 1998 में पोखरण में परमाणु परीक्षण करके भारत को परमाणु शक्ति सम्पन्न राष्ट की कतार में खड़ा कर दिया। 19 फरवरी 1999 को सदा-ए-सरहद नाम से दिल्ली से लाहौर तक बस सेवा शुरू करने का श्रेय इनको ही मिलता है। सन् 1999 के करगिल युद्ध में अटल जी ने पाकिस्तान की सीमा का उल्लंघन न करने के अन्तर्राष्ट्रीय करार का सम्मान करते हुए धैर्यपूर्वक किन्तु ठोस कार्यवाही करके भारतीय क्षेत्र को पाकिस्तानी सेना से मुक्त कराया। आर्थिक रूप से देश को मजबूत बनाने और व्यापार को बढ़ावा देने के उद्देश्य से उन्होंने 2001 में स्वर्णिम चतुर्भुज राष्ट्रीय राजमार्ग परियोजना की शुरुआत की, जिससे देश के चार

प्रमुख शहरों– दिल्ली, कोलकाता, चेन्नई और बम्बई को सड़क द्वारा जोड़ा गया।

अटल जी एक लोकप्रिय राजनेता ही नहीं थे बल्कि कुशल साहित्यकार भी थे। इनकी पहली कविता ताजमहल थी, जिसमें उन्होंने गरीब मजदूरों के शोषण को अपनी लेखनी का विषय बनाया। इसके अलावा मृत्यु या हत्या, अमर बलिदान, कैसे कविराय की कुंडलियाँ, संसद में तीन दशक, अमर आग है, कुछ लेख–कुछ भाषण, सेक्युलरवाद, राजनीति की रपटीली राहें, बिन्दु–बिन्दु विचार तथा मेरी इक्यावन कविताएँ (काव्य संग्रह) आदि उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं।

सर्वतोमुखी विकास के लिए किये गये योगदान तथा असाधारण कार्यों के लिए सन्2015 में अटल जी को 'भारत रत्न' से सम्मानित किया गया। इसके साथ ही इन्हें 2015 में बांग्लादेश सरकार द्वारा प्रदत्त फ्रेंड्स ऑफ बांग्लादेश लिबरेशन वार अवार्ड, 1994 में भारत रत्न पंडित गोविंद वल्लभ पंत पुरस्कार, श्रेष्ठ सांसद पुरस्कार एवं लोकमान्य तिलक पुरस्कार तथा 1992 में पद्म विभूषण की उपाधि भी मिली थी। सन् 2005 में उन्होंने राजनीति से संन्यास ले लिया और 16 अगस्त 2018 को एक लम्बी बीमारी के बाद दिल्ली में उनका निधन हो गया।

प्रस्तुत कविता **'मन का सन्तोष'** अटल जी के काव्य संग्रह मेरी इक्यावन कविताएँ से ली गयी है। इस कविता की रचना कवि ने सन् 1994 में न्यूयार्क में किया था। इसमें कवि अपने मन की परतों को खोलता है, अपने किये हुए कर्मों का लेखा–जोखा करता है और कहता है कि जीवन के अंतिम क्षण में अगर वह आत्मग्लानि से मुक्त होकर यह स्वीकारे कि उसने जीवन में जो किया सही समझकर किया, किसी को जान–बूझकर ठेस पहुँचाने के लिए नहीं तो उसका जीवन सार्थक है। वही मन का सन्तोष है।

***

7. स्वप्न झरे फूल से, गीत चुभे शूल से

– गोपालदास 'नीरज'

स्वप्न झरे फूल से, गीत चुभे शूल से,
लुट गये सिंगार सभी बाग के बबूल से,
और हम खड़े–खड़े बहार देखते रहे,
कारवाँ गुज़र गया गुबार देखते रहे।

नींद भी खुली न थी कि हाय धूप ढल गई,
पाँव जब तलक उठे कि ज़िन्दगी फिसल गई,
पात–पात झर गये कि साख–साख जल गई,
चाह तो निकल सकी न, पर उमर निकल गई।

गीत अश्क बन गये, छन्द हो दफन गये,
साथ के सभी दिए, धुआँ पहन–पहन गये,
और हम झुके–झुके मोड़ पर रुके–रुके
उम्र के चढ़ाव का उतार देखते रहे,
कारवाँ गुज़र गया, गुबार देखते रहे।

क्या शबाब था कि फूल–फूल प्यार कर उठा,
क्या जमाल था कि देख आइना मचल उठा,
इस तरफ ज़मीन और आसमाँ उधर उठा,
थामकर जिगर उठा कि जो मिला नज़र उठा।
एक दिन मगर यहाँ ऐसी कुछ हवा चली,
लुट गई कली–कली कि घुट गई गली–गली,
और हम लुटे–लुटे वक्त से पिटे–पिटे,

साँस की शराब का खुमार देखते रहे।
कारवाँ गुज़र गया, गुबार देखते रहे।

हाथ थे मिले कि ज़ुल्फ चाँद की सँवार दूँ,
होंठ थे खुले कि हर बहार को पुकार लूँ,
दर्द था दिया गया कि हर दुःखी को प्यार दूँ,
और साँस यूँ कि स्वर्ग भूमि पर उतार दूँ।
हो सका न कुछ मगर, शाम बन गई सहर,
वह उठी लहर कि ढह गये किले बिखर–बिखर,
और हम डरे–डरे, नीर नैन में भरे,
ओढ़ कर कफ़न पड़े मज़ार देखते रहे।
कारवाँ गुज़र गया, गुबार देखते रहे।

माँग भर चली कि एक जब नई–नई किरन,
ढोलकें छुमुक उठी, ठुमक उठे चरन–चरन,
शोर मच गया कि ले चली दुल्हन, चली दुल्हन,
गाँव सब उमड़ पड़ा बहक उठे नयन–नयन।
पर तभी ज़हर भरी गाज एक वह गिरी,
पुँछ गया सिंदूर तार–तार हुई चूनरी,
और हम अजान से दूर के मकान से,
पालकी लिए हुए कहार देखते रहे।
कारवाँ गुज़र गया, गुबार देखते रहे।

***

शब्दार्थ :

गुबार – धूल
ख़ुमार – नशा
शबाब – जवानी
सहर – सवेरा
जमाल – खूबसूरती
मज़ार – कब्र

***

गोपालदास 'नीरज':-

गोपालदास सक्सेना 'नीरज' का जन्म 4 जनवरी 1925 को उत्तर प्रदेश के इटावा जिले के पुरावली गाँव में हुआ। मात्र 6 वर्ष की आयु में ही इनके पिता जी का निधन हो गया। शुरुआत में इटावा की कचहरी में कुछ समय तक टाइपिस्ट का काम किया। उसके बाद सिनेमाघर की एक दुकान पर नौकरी की। जगह-जगह नौकरी करने के साथ-साथ प्राइवेट परीक्षाएँ देकर 1993 में प्रथम श्रेणी में हिन्दी साहित्य में एम.ए. किया। कवि सम्मेलनों में अपार लोकप्रियता के चलते नीरज को मुम्बई के फिल्म जगत ने गीतकार के रूप में 'नई उमर की नई फसल' के गीत लिखने का निमंत्रण दिया। फिल्मों में गीत लेखन का सिलसिला 'मेरा नाम जोकर', 'शर्मीली' और 'प्रेम पुजारी' जैसी अनेक चर्चित फिल्मों में कई वर्षों तक जारी रहा। लेकिन जल्द ही मुम्बई की ज़िन्दगी से भी उनका मन उचट गया और वे अलीगढ़ वापस चले गये। अपने बारे में उनका यह शेर आज भी मुशायरों में फरमाइश के साथ सुना जाता है :-

इतने बदनाम हुए हम तो इस ज़माने में,
लगेंगी आपको सदियाँ हमें भुलाने में।
न पीने का सलीका न पिलाने का शऊर,
ऐसे भी लोग चले आए हैं मयखाने में।

इनकी कुछ प्रकाशित रचनाएँ हैं- संघर्ष, प्राणगीत, दर्द दिया है, दो गीत, गीत भी अगीत भी, नदी किनारे, कारवाँ गुज़र गया, नीरज की गीतिकाएँ आदि। इनको 1991 में भारत सरकार की ओर से पद्मश्री सम्मान और 2007 में पद्म भूषण सम्मान प्राप्त हुआ। फिल्म जगत में सर्वश्रेष्ठ गीत लेखन के लिए 1970 के दशक में लगातार तीन बार फिल्म फेयर अवार्ड मिला। 1970 में फिल्म 'चन्दा और बिजली' के गाने काल का पहिया घूमे रे भइया, 1971 में फिल्म 'पहचान' के गाने 'बस यही अपराध में हर बार करता हूँ' तथा 1972 में

फिल्म 'मेरा नाम जोकर' के मशहूर गीत 'ऐ भाई! ज़रा देख के चलो' के लिए उन्हें यह अवार्ड मिला।

हिन्दी साहित्य जगत और फिल्मी दुनिया की इस महान हस्ती का निधन दिल्ली में 19 जुलाई 2018 को हुआ।

'कारवाँ गुज़र गया गुबार देखते रहे'

कवि श्रेष्ठ श्री गोपालदास नीरज हिंदी काव्य जगत के उन गीतकारों में से हैं जिन्होंने साहित्य को अनेक कालजयी रचनाओं से समृद्ध किया है। उनकी रचनाएँ सामाजिक असंतुलन से उपजी विकृतियों के कोलाहल में गीत बनकर उभरती हैं और हृदय को स्पंदित करती हुई सांसों में समां जाती हैं। प्रस्तुत गीत 'कारवां गुज़र गया गुबार देखते रहे' उनकी सुप्रसिद्ध रचना है जो वर्तमान समय में भी अपनी प्रासंगिकता सिद्ध करती है। यह रचना जीवन के झंझावातों में उलझे हुए उन बेबस पलों को जीवंत करती है जो अधूरे सपनो की गोंद में दम तोड़ देते हैं और हम निरीह और असंवेदनशील बने उन्हें देखते रह जाते हैं। मनुष्य जीवन की सच्चाई को सात रंगों के इंद्रधनुष में ही ढूंढ़ता है और इसी खोज में पूरी उम्र गुज़ार देता है। वह यह भूल जाता है कि जीवन के और भी कई आयाम हैं जिनके रंग अनगिनत हैं। इतना ही नहीं, वह यह भी भूल जाता है कि उसके स्वयं के बाहर भी कोई दुनिया है जिसके प्रति उसका कोई कर्तव्य है। उसे अपनी ख़ुशी के उस पार कुछ भी नहीं दिखाई देता। उसकी मृत संवेदना लोगों का दुःख, उनकी तड़प और बेबसी देखकर भी नहीं पिघलती।

नीरज जी ने समाज के इसी परिदृश्य को इस कविता में अत्यंत भावपूर्ण ढंग से उकेरा है। उन्होंने अपने समर्थ शब्दों द्वारा समाज के वास्तविक रूप को दर्शाने का प्रयास किया है। आज हम अपने भौतिक उत्कर्ष के आगे संबधों की गरिमा, सामाजिक प्रतिबद्धता और मनुष्यता के सनातन मूल्यों को विस्मृत करते जा रहे हैं। यही कारण है कि हमारी भावात्मक चेतना का तीव्र गति से पतन हो रहा है और सामाजिक विद्रूपताएँ सुरसा के मुँह की तरह बढ़ती चली जा रही हैं।

छल, आडम्बर, शोषण, अनाचार और नैतिक पतन का हर तरफ बोलबाला है जो न जाने कितने मासूम सपनों को हर पल लील रहे हैं और विडम्बना यह है कि सब कुछ देखकर भी हम चुपचाप पड़े हैं। सुलगते हुए सपनो की ऊष्मा हम तक पहुंचती तो है परन्तु हम कहीं और उलझे हुए होते हैं। सच्चाई से पलायन करते–करते हम जीवन की प्राथमिकताएँ तय करना ही भूल जाते हैं फिर वे घटनाएं घटने लगती हैं जिनकी हम कभी कल्पना भी नहीं किये रहते हैं। कवि इन्हीं परिस्थितियों से मर्माहत है, वह चाहता है कि हम आगे बढ़कर प्रतिकूल परिस्थितियों से मुठभेड़ करें और उन्हें अपने अनुकूल बनायें न कि बेबस बनकर आँसू बहाते हुए पछताते रहें। नव जागरण का उद्घोष संकल्पों की वाणी से होता है और संकल्प समय के मोहताज नहीं होते। समय तो कभी किसी के लिए नहीं रुकता परन्तु जब हम रूक जाते हैं तो मुट्ठी से रेत की तरह फिसल जाने वाला समय अचानक अपना तांडव दिखाकर आगे बढ़ जाता है और हम हाथ पर हाथ धरे बैठे ही रह जाते हैं।

प्रस्तुत कविता सामाजिक बुराइयों से मुठभेड़ करते हुए मानवीय संवेदनाओं और नैतिक मूल्यों को पुनर्स्थापित करने का आह्वान करती है। परिस्थिति का सही आंकलन कर, समय को साधते हुए जीवन की प्राथमिकताएँ तय करना और सच्चाई के साथ डटकर खड़े रहना ही कविता के भावार्थ में छुपा हुआ उद्घोष है। बेबसी और निराशा की अँधेरी गुफा में बैठकर पुरुषार्थ का सूरज उगाने का सपना पालना कायरता है। इसीलिए समय के रथ पर सवार होकर अपनी सफलता की ऐसी कहानी लिखनी चाहिए कि आने वाला समय पछताते हुए कभी न कह सके कि 'कारवाँ गुज़र गया गुबार देखते रहे'।

***

8. उर्वशी

– रामधारीसिंह 'दिनकर'

मैं मानवी नहीं, देवी हूँ; देवों के आनन पर,
सदा एक झिलमिल रहस्य–आवरण पड़ा होता है।
उसे हटाओ मत, प्रकाश के पूरा खुल जाने से,
जीवन में जो भी कवित्व है, शेष नहीं रहता है।

स्पष्ट शब्द मत चुनो, चुनो उनको जो धुँधियाले हैं;
ये धुँधले ही शब्द ऋचाओं में प्रवेश पाने पर
एक साथ जोड़ते अनिश्चित को निश्चित आशय से।

और जहाँ भी मिलन देखते हो प्रकाश–छाया का,
वही निरापद बिन्दु मनुज–मन का आश्रय शीतल है।
सघन कुंज, गोधूलि, चाँदनी, ये यदि नहीं रहें तो
दिन की खुली धूप में कब तक जीवन चल सकता है?

द्वाभा का वरदान, सभी कुछ अर्धस्फुट, झिलमिल है,
स्वप्न स्वप्न से, हृदय हृदय से मिलकर सुख पाते हैं।
यदि प्रकाश हो जाए और जो कुछ भी छिपा जहाँ है,
सब–के–सब हो जाएँ सामने खड़े नग्न रूपों में,
कौन सहेगा वह भीषण आघात भेद विघटन का?
इसीलिए, कहती हूँ, अब तक जितना जान सके हो,
उतना ही है अलम्; और आगे इससे जाने पर,

स्यात्, कुतूहल–शमन छोड़ कुछ हाथ नहीं आएगा।
और करूँगी क्या कहकर मैं शमित कुतूहल को भी?

मैं अदेह कल्पना, मुझे तुम देह मान बैठे हो;
मैं अदृश्य, तुम दृश्य देखकर मुझ को समझ रहे हो
सागर की आत्मजा, मानसिक तनया नारायण की।

कब था ऐसा समय कि जब मेरा अस्तित्व नहीं था?
कब आएगा वह भविष्य जिस दिन मैं नहीं रहूँगी?
कौन पुरुष, जिसकी समाधि में मेरी झलक नहीं है?
कौन त्रिया, मैं नहीं राजती हूँ जिसके यौवन में?
कौन लोक, कौंधती नहीं मेरी ह्लादिनी जहाँ पर?
कौन मेघ, जिसको न सेज मैं अपनी बना चुकी हूँ?
कहूँ कौन–सी बात और रहने दूँ कथा कहाँ की?
मेरा तो इतिहास प्रकृति की पूरी प्राण–कथा है,
उसी भाँति निस्सीम, असीमित जैसे स्वयं प्रकृति है।

***

शब्दार्थ :

झिलमिल – धुँधला
आवरण – परदा
ऋचा – वेद मंत्र
द्वाभा – ज्योति
अर्द्धस्फुट – अर्द्धविकसित
भेद–विघटन – रहस्योद्घाटन
अलम – पर्याप्त
आत्मजा – बेटी
ह्लादिनी – बिजली
त्रिया – स्त्री

रामधारीसिंह 'दिनकर'

दिनकर जी का जन्म बिहार के मुंगेर जिले के सिमरिया ग्राम में सन् 1908 में हुआ था। पटना विश्वविद्यालय से बी.ए. आनर्स की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद उन्होंने पहले सब रजिस्ट्रार के पद पर और फिर प्रचार–विभाग के उपनिदेशक के रूप में कुछ वर्षों तक सरकारी नौकरी की। इसके बाद उनकी नियुक्ति मुजफ्फरपुर कॉलेज में हिन्दी प्राध्यापक के रूप में हुई। सन् 1952 में उन्होंने संसद सदस्य के रूप में राजनीति में प्रवेश किया। कुछ समय तक उन्होंने भागलपुर विश्वविद्यालय के उप कुलपति पद पर भी कार्य किया। भारत सरकार ने उन्हें पद्म भूषण की उपाधि से अलंकृत किया। उनका देहावसान सन् 1974 में हुआ।

रामधारीसिंह का उपनाम 'दिनकर' था। उनकी कविता का मूल स्वर क्रांति, शौर्य और ओज का रहा है। इसलिए उनकी कविताओं में आत्मविश्वास, आशावाद, संघर्ष, राष्ट्रीयता, भारतीय संस्कृति आदि का ओजपूर्ण वर्णन मिलता है। जन–मानस में नवीन चेतना उत्पन्न करना उनकी कविता का प्रुमख उद्देश्य रहा है। उनकी कविताओं की विशेषता यथार्थ कथन, दृढ़तापूर्वक अपनी आस्था की स्थापना और उन बातों की चुनौती देना है जिन्हें वे अपने समाज और राष्ट्र के लिए उपयोगी नहीं समझते थे। भारतीय संस्कृति के प्रति उनके अगाध प्रेम ने उन्हें राष्ट्रीय कवि के रूप में प्रतिष्ठा दिलाई।

'रेणुका', 'द्वंद्वगीत', 'हुंकार', 'सावंती', 'कुरुक्षेत्र', 'रश्मिरथी', 'उर्वशी', 'नीलकुसुम', 'परशुराम की प्रतीक्षा', 'धूप–छाँव', आदि दिनकर की प्रसिद्ध काव्य कृतियाँ हैं। उनकी भाषा विषय के अनुरूप है– कहीं कोमल–कांत पदावली है, तो कहीं ओजपूर्ण शब्दों का प्रयोग मिलता है। भाषा में प्रवाह लाने के लिए उन्होंने देशज शब्दों और उर्दू–फारसी के शब्दों का भी प्रचुर प्रयोग किया है। मूल रूप से दिनकर ओजस्वी अभिव्यक्ति के अमर कवि हैं।

उर्वशी :

पुरुरवा धरती पुत्र है और उर्वशी देवलोक से उतरी हुई नारी है। पुरुरवा के भीतर देवत्व की तृष्णा है और उर्वशी सहज निश्चित भाव से पृथ्वी का सुख भोगना चाहती है।

इस अंक का प्रारंभ गन्धमादन पर्वत पर बैठे पुरुरवा और उर्वशी के प्रेम प्रसंग से होता है। काफी समय तक उर्वशी पुरुरवा के कई प्रश्नों का उत्तर देने तथा उसके चित्त में प्रकृति और संन्यास में अभेद स्थापित करने का प्रयत्न करती है। फिर भी पुरुरवा के लिए उर्वशी और उसके विचार रहस्यमय बने रहते हैं। उसे लगता है कि उर्वशी से उसका जन्म–जन्मान्तर का सम्बन्ध है। पुरुरवा के प्रश्न किये जाने पर वह स्वयं को देवी कहकर अत्यन्त रहस्यमय ढंग से अपना परिचय देती है। वह पुरुरवा का ध्यान उस अदृश्य, अव्यक्त, सूक्ष्म सौन्दर्य की ओर आकृष्ट करना चाहती है जो देह की समस्त पार्थिव प्राचीरों को भेद ज्योति के अन्तराल में प्रकाशित होता है। वहीं नर तथा नारी का शाश्वत सौन्दर्य है। वह कहती है कि उसका इतिहास तो इस प्रकृति के समस्त प्राणियों की कथा है। वह उसी प्रकार असीम है, जिस प्रकार यह प्रकृति।

***

9. अशोक की चिंता

– जयशंकर प्रसाद

जलता है यह जीवन पतंग।

जीवन कितना ? अति लघु क्षण,
तृष्णा वह अनलशिखा बन
दिखलाती रक्तिम यौवन।
जलने की क्यों न उठे उमंग ?

है ऊँचा आज मगध शिर
पटतल में विजित पड़ा
दूरागत क्रन्दन ध्वनि फिर,
क्यों गूँज रही है अस्थिर

कर विजयी का अभिमान भंग ?

इन प्यासी तलवारों से,
इन पैनी धारों से,
निर्दयता की मारों से,
उन हिंसक हुंकारों से,

नत मस्तक आज हुआ कलिंग।

यह सुख कैसा शासन का ?
शासन रे मानव मन का,
गिरि भार बना–सा तिनका,
यह घटाटोप दो दिन का

फिर रवि शशि किरणों का प्रसंग।

यह महादम्भ का दानव
पीकर अनंग का आसव

कर चुका महा भीषण रव,
सुख दे प्राणी को मानव
तज विजय पराजय का कुढंग।
संकेत कौन दिखलाती,
मुकुटों को सहज गिराती,
जयमाला सूखी जाती,
नश्वरता गीत सुनाती,
तब नहीं थिरकते हैं तुरंग।
वैभव की यह मधुशाला,
जग पागल होनेवाला
अब गिरा–उठा मतवाला
प्याले में फिर भी हाला,
यह क्षणिक चल रहा राग–रंग।
काली–काली अलकों में,
आलस, मद नत पलकों में,
मणि मुक्ता की झलकों में,
सुख की प्यासी ललकों में,
देखा क्षण भंगुर हैं तरंग।
फिर निर्जन उत्सव शाला,
नीरव नूपुर श्लथ माला,
सो जाती है मधु बाला
सूखा लुढ़का है प्याला,
बजी वीणा न यहाँ मृदंग।
इस नील विषाद गगन में,
सुख चपला–सा घन में,

चिर विरह नवीन मिलन में,
इस मर–मरीचिका–वन में
उलझा है चंचल मन कुरंग।
आँसू कन–कन ले छल–छल,
सरिता भर रही दृगंचल,
सब अपने में हैं चंचल,
छूटे जाते सूने पल,
खाली न काल का है निषंग।
वेदना विकल यह चेतन,
जड़ का पीड़ा से नर्तन,
लय सीमा में यह कम्पन,
अभिनयमय हैं परिवर्तन,
चल रही यही कब से कुढंग।
करुणा गाथा गाती है,
यह वायु बही जाती है,
ऊषा उदास आती है,
मुख पीला ले जाती है,
वन मधु पिंगल सन्ध्या सुरंग।
आलोक किरन है आती,
रेशमी डोर खिंच जाती
दृग पुतली कुछ नच पाती
फिर तम पट से छिप जाती
कलरव कर सो जाते विहंग।
जब पल भर का है मिलना,

फिर चिर वियोग में झिलना,
एक ही प्राप्त हैं खिलना,
फिर सूख धूल में मिलना,
तब क्यों चटकीला सुमन रंग ?
संसृति के विक्षत पर रे !
यह चलती है डगमग रे!
अनुलेप सदृश तू लग रे!
मृदु दल बिखेर इस मग रे!
कर चुके मधुर मधुपान भृंग।
भुनती वसुधा, तपते नग,
दुखिया है सारा अग जग,
कंटक मिलते हैं प्रति पग,
जलती सिकता का यह मग,
बह जा बन करुणा की तरंग,
जलता है यह जीवन पतंग।

***

शब्दार्थ :

घटाटोप – घनघोर घटा
आसव – मदिरा
अनंग – कामदेव
श्लथ – शिथिल
निषंग – तरकश
विकर्षण – आहत, घायल
अनुलेप – सुगंधित लेप
पिंगल – तांबे के रंग का
कुंग – हिरन

***

जयशंकर प्रसाद :

हिन्दी कवि, नाटककार, कहानीकार, उपन्यासकार तथा निबन्धकार जयशंकर प्रसाद जी का जन्म 30 जनवरी 1889 को वाराणसी, उत्तर प्रदेश में हुआ। इनके पिता बाबू देवीप्रसाद जी कलाकारों का आदर करने के लिए विख्यात थे। इनका काशी में बड़ा सम्मान था और काशी नरेश के बाद 'हर हर महादेव' से इनके पिताजी का स्वागत काशी की जनता करती थी। घर के वातावरण के कारण साहित्य और कला के प्रति उनमें प्रारंभ से ही रूचि थी और कहा जाता है कि नौ वर्ष की उम्र में ही इन्होंने कलाधर के नाम से ब्रजभाषा में एक सवैया लिखकर 'रसमय सिद्ध' को दिखाया था।

वे एक युगप्रवर्तक लेखक थे, जिन्होंने एक साथ कविता, नाटक, कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में हिन्दी साहित्य को गौरवान्वित होने योग्य कृतियाँ दीं। कवि के रूप में वे निराला, पन्त और महादेवी के साथ छायावाद के प्रमुख स्तम्भ के रूप में प्रतिष्ठित हुए हैं। नाटक लेखन में भारतेन्दु के बाद वे एक अलग धारा बहाने वाले युगप्रवर्तक नाटककार रहे जिनके नाटक आज भी पाठक चाव से पढ़ते हैं। इसके अलावा कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में भी उन्होंने कई उल्लेखनीय कृतियाँ लिखी हैं, जो मानवीय करुणा और भारतीय मनीषा के अनेकानेक गौरवपूर्ण पक्षों का उद्घाटन किया है। 47 वर्षों के छोटे से जीवन काल में कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास और आलोचनात्मक निबन्ध आदि विभिन्न विधाओं में रचनाएँ रचीं।

काव्य क्षेत्र में इनकी कीर्ति का मूलाधार 'कामायनी' है। यह रूपक कथाकाव्य है और उनकी यह कृति छायावाद और खड़ी बोली की काव्य गरिमा का ज्वलन्त उदाहरण है। इनको इस रचना के लिए 'मंगलाप्रसाद पारितोषिक' प्राप्त हुआ था।

इनकी बहुचर्चित और विख्यात रचनाएँ कुछ ऐसी हैं :– कानन कुसुम, झरना, आँसू, लहर, कामायनी आदि (काव्यसंग्रह); प्रतिध्वनि, आकाशदीप आदि (कहानी संग्रह) हैं। कंकाल, तितली, इरावती (उपन्यास); चन्द्रगुप्त, ध्रुवस्वामिनी, कामना, जनमेजय का नाग यज्ञ (नाटक), सम्राट चंद्रगुप्त आदि (निबन्ध) हैं।

इस महान साहित्यकार का निधन क्षय रोग के कारण 15 नवम्बर, 1937 को काशी में हुआ।

अशोक की चिंता :–

जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित अशोक की चिंता, 'लहर' काव्य संग्रह से लिया गया है। इस कविता में प्रसाद जी अनुभूति और प्रभाव के साथ ही करुणा की स्थापना करना चाहते हैं। भीषण नरसंहार के पश्चात सम्राट अशोक विजयी तो होते हैं, लेकिन उन्हें विजय की पराजयपूर्ण अनुभूति होती है। अपने एकांत क्षणों में अशोक विगत जीवन पर दृष्टिपात करते हैं और क्षण की नश्वरता में क्यों आसक्ति, आकर्षण या मोह उत्पन्न होता है, इस विडम्बना का साक्षात्कार करते हैं। इससे त्राण पाने के लिए करुणा का मार्ग ही श्रेयस्कर हो सकता है।

***

परिशिष्ट

वाणिज्यिक तथा प्रशासनिक शब्दावली :

1.	Act	अधिनियम
2.	Accountant General	महालेखाकार
3.	Adhoc	तदर्थ
4.	Basic pay	मूल वेतन
5.	Brochure	विवरणिका
6.	Central revenue	केन्द्रीय राजस्व
7.	Code of conduct	आचरण संहिता
8.	Compensatory Leave	प्रतिपूरक अवकाश
9.	Compliance	अनुपालक
10.	corrigendum	शुद्धि पत्र
11.	Cross examination	प्रति परीक्षा
12.	Decade	दशक
13.	Deputation	प्रतिनियुक्ति
14.	Distribution	वितरण
15.	Embezzlement	गबन
16.	Enquiry committee	जाँच समिति
17.	Financial approval	वित्तीय अनुमोदन
18.	Gazette of India	भारत का राजपत्र

19.	Honorarium	मानदेय
20.	Income tax commissioner	आयकर आयुक्त
21.	Inspector General of Police	पुलिस महानिरीक्षक
22.	Ledger	खाता
23.	Linguist	भाषाविद्
24.	Lump sum	एकमुश्त राशि
25.	Ministry of Finance	वित्त मंत्रालय
26.	Mutation	नामान्तरण
27.	No objection certificate	अनापत्ति प्रमाणपत्र
28.	Office procedure	कार्यालय पद्धति
29.	Passport	पारपत्र
30.	Performance	निष्पादन
31.	Perusal	अवलोकन
32.	Periodical	आवधिक
33.	Press conference	पत्रकार सम्मेलन
34.	Price control	मूल्य नियंत्रण
35.	Recommendation	संस्तुति
37.	Remuneration	पारिश्रमिक
38.	Representation	अभ्यावेदन
39.	Resolution	संकल्प

40.	Respondent	प्रतिवादी
41.	Retrenchment	छंटनी
42.	Sanction	संस्वीकृति
43.	Session	अधिवेशन
44.	Treasury	ख़जाना
45.	Tribunal	अधिकरण
46.	Under consideration	विचाराधीन
47.	Unparliamentry	असंसदीय
48.	Vigilance	सतर्कता
49.	Voluntary	ऐच्छिक
50.	Warning	चेतावनी

***